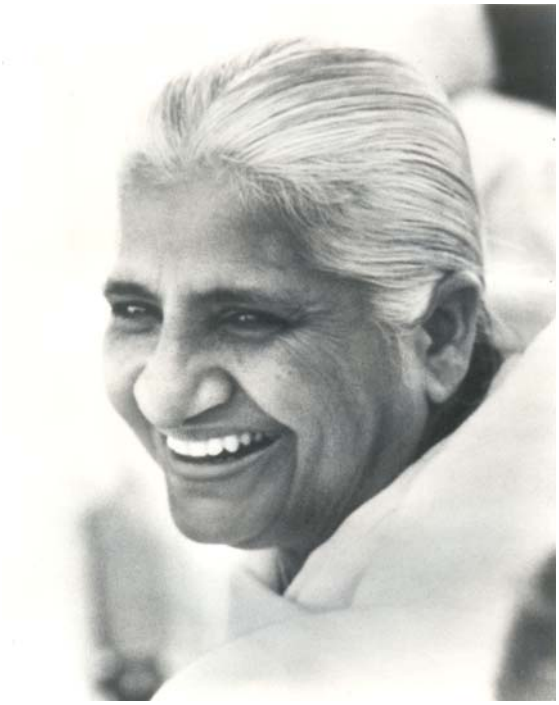

11. गुप्त करने तथा प्रत्यक्ष करने की कला
(The Art of Concealing and Revealing)

परमात्मा की महिमा करते हुए लोग कहते हैं कि ''अपने आप सभी कुछ करके, अपने आप छिपाया।'' अतः यह भी एक बहुत बड़ी कला है कि बहुत महान् कार्य करते हुए भी मनुष्य स्वयं को गुप्त एवं साधारण वेष-भूषा में रखे और अपनी ख्याति, यश या प्रशंसा को मन से स्वीकार न करे बल्कि स्वयं को छिपा कर रखे। बहुत-से मनुष्य कोई छोटा-सा भी कार्य करते हैं तो उसके बदले में नाम कमाना चाहते हैं, प्रशंसा सुनना चाहते हैं अथवा उच्च स्थान पाना चाहते हैं। आज कोई कुर्सी का इच्छुक है, कोई गुरु-गद्दी का, कोई मान का, कोई प्रतिष्ठा का। परन्तु हमने प्रजापिता ब्रह्मा के जीवन में यह देखा है कि वे स्वयं को कैसे छिपाते रहे। या तो वे लोगों को कहते, ''ये बच्चियाँ (ब्रह्माकुमारियाँ) मुझसे ज़्यादा प्रवीण हैं'' या वे कहते, ''हम तो पतित थे,यह सब शिव बाबा की कमाल है!'' कभी वे कहते, ''मैं तो गाँव का रहने वाला था, मुझे शिव बाबा ने बादशाही दे दी,'' फिर कहते, ''शिव बाबा न आते तो हम जानते ही क्या थे? हम तो दुर्गति को प्राप्त थे।'' फिर कहते, ''शिव बाबा, माताओं को ज्ञानामृत का कलश देने के लिए आये हैं, परन्तु चूँकि वह मेरे मुख से बोलते हैं, अतः मेरे कान निकट होने कारण मैं भी सुन लेता हूँ, गोया इन माताओं के निमित्त कारण से मेरा भी कल्याण हो जाता है।'' कभी वे कहते कि मातेश्वरी जी मुझ से भी आगे हैं क्योंकि वह बाल ब्रह्मचारिणी हैं जबकि मैं सीढ़ी उतरा हूँ। इस प्रकार सदा दूसरों को अपने से आगे बताना, अपने को छिपाना, इस कला का प्रयोग कर वे न केवल दूसरों को आगे बढ़ाते, उनमें उल्लास पैदा करते बल्कि उन्हें नम्रता का तथा यश को अस्वीकार कर गुप्त रहने का पाठ पढ़ाते रहे। वे सदा यही कहते कि ''गुप्त दान से महान् पुण्य होता है, गुप्त सेवा से अधिक बल मिलता है और गुप्त पुरुषार्थी ही आगे बढ़ जाता है। वे कहते, ''शिव बाबा गुप्त हैं, हमारा पुरुषार्थ भी गुप्त है, इसलिए हमें भी गुप्त ही रहना है अर्थात् अपनी प्रत्यक्षता नहीं करनी है बल्कि शिव बाबा का नाम लोगों के सामने लाना है। सभी को यही कहना कि 'शिव भगवानुवाच' अर्थात् शिव बाबा ने ऐसा कहा है, हम तो सेवक (Servant)

हैं अथवा विद्यार्थी हैं!'' इस प्रकार स्वयं को गुप्त रखना और शिव बाबा को प्रत्यक्ष करना ही गोया अपनी भी प्रत्यक्षता करना है। क्योंकि बच्चा जब गुणवान बनकर बाप को ही अपने सारे गुणों का श्रेय देकर उसकी प्रत्यक्षता करता है तो बाप फिर उस बच्चे के शील की महिमा करके उसकी प्रत्यक्षता करता है (Son shows father and father shows son)।

बाबा यह भी बताते कि यश की कामना करने अथवा नामाचार स्वीकार करने से पुण्य क्षीण होते हैं और योग रूपी कमाई में घाटा पड़ता है। जो योग का अभ्यास करता है उसे चाहिये कि न अपनी महिमा स्वयं करे, न ही दूसरों से अपनी महिमा स्वीकार करे अर्थात् उसे चाहिये कि यदि अन्य कई लोग उसकी महिमा करें तो वह उसे सुनकर अभिमानी न बने, ख़ुशी से इतराने न लगे और उस महिमा को अपने लिए न मानकर उन्हें यह कहे कि ''यह तो सब शिव बाबा का कमाल है, कराने वाला तथा सामर्थ्य देने वाला वही है।''

तो देखिये कार्य करते हुए, अपने जीवन में अधिकाधिक गुण भरते हुए भी स्वयं को गुप्त रखना, यह एक कला ही तो है। इस कला से रहित मनुष्य का न तो मन मानता है कि वह कार्य भी करे और लोग उसके गुण न गायें, उसकी प्रशंसा न करें या उसका श्रेय उसे न दें, न ही वह युक्तियुक्त अथवा ज्ञान-संगत रीति से स्वयं को गुप्त करना जानता ही है। इस कलाहीनता का परिणाम यह होता है कि वह अपने किये हुए अच्छे कार्य का क्षणिक फल, यश के रूप में भोगकर खाली हो जाता है और उस प्रशंसा को स्वीकार करके अभिमान का रोग मुँह माँग कर ले लेता है तथा उसका स्वभाव ही ऐसा हो जाता है कि जहाँ जाता है, वहाँ उसकी यह कामना होती है कि लोग मेरा मान करें, मुझे भी समझदार और अच्छा कार्यकर्त्ता मानें, मुझे आदर दें, मेरा आतिथ्य करें तथा मेरे विचार पूछें। इस प्रकार वह नम्रता रूपी अनमोल रत्न को गँवाकर कंगाल हो जाता है, लोगों द्वारा मान रूपी टुकड़े के लिए सदा मोहताज रहता है और उनसे मन-चाहा आदर न मिलने पर उनसे रुष्ट, असन्तुष्ट या खिन्न होकर दुःखी होता है। तो स्पष्ट है कि जीवन को नम्रता, स्नेह, सहयोग आदि दिव्य गुणों से युक्त बनाये रखने के लिए तथा आन्तरिक रीति से सदा प्रसन्न, अपनी मस्ती में मस्त रहने के लिए स्वयं को गुप्त रखना भी एक बहुत बड़ी एवं उपयोगी कला है।

प्रत्यक्ष करना

जैसे स्वयं को गुप्त रखना एक महान् कला है वैसे ही प्रत्यक्ष करना भी एक कला है। पब्लिसिटी (Publicity) भी एक कला है। बहुत-से लोग अपनी या अन्य किसी की पब्लिसिटी करना जानते हैं परन्तु उसके साथ ही साथ वे गुप्त नहीं रहते, अतः उसे दिव्यता के दृष्टिकोण से कोई कला नहीं कहेंगे। कला तो इसमें है कि दोनों बातें साथ-साथ सिद्ध हों। हम गुप्त भी रहें और प्रत्यक्ष भी हों। यह कैसे हो सकता है? कोई मनुष्य कह सकता है कि ये दोनों काम एक-साथ करने की कामना करना तो गोया ऐसी कामना करना है कि हम आटा भी गूँधें और हिलें भी नहीं। परन्तु बात वास्तव में ऐसी नहीं है। आपने देखा होगा कि नट रस्सी पर चढ़कर कर्त्तव्य भी करता है और सन्तुलन भी रखता है। ऐसे ही ये दोनों कार्य भी एक-साथ हो सकते हैं, कैसे?

वास्तव में स्वयं नम्र रहना, स्वयं को गुप्त रखना ही अप्रत्यक्ष रूप से प्रत्यक्ष करना है। योगाभ्यासी एवं ज्ञानवान मनुष्य का लक्ष्य तो यही रहता है कि वह परमपिता ही की महिमा करे तथा कराये। इस उद्देश्य से वह अपना अनुभव व्यक्त करते हुए दिल की गहराइयों से कहता है कि मैं पहले पतित था, विकारों के गर्त्त में था, दुःखी था, घोर अन्धकार-कूप में था, प्रभु ने मुझ पर कृपा की और मुझे... बनाया है। इस प्रकार प्रभु की प्रत्यक्षता करने से उसकी अपनी प्रत्यक्षता साथ-साथ होती जाती है क्योंकि उससे यह मालूम हो जाता है कि अब उसका जीवन कैसा उच्च बना है। तथापि इसका उद्देश्य यह नहीं होता कि वह अपनी प्रत्यक्षता करे। उसका

लक्ष्य तो गुप्त प्रभु के सर्वोत्तम एवं कल्याणकारी कर्त्तव्यों को ही लोगों के ध्यान में ला कर उन्हें विपरीत-बुद्धि से बदलकर प्रीत-बुद्धि बनाना होता है। परन्तु ऐसा करने के लिए वह मन-वचन-कर्म से सच्चा, पवित्र, सेवा में सदा तत्पर एवं मधुरभाषी होकर व्यवहार करता है, तभी वह प्रत्यक्षता कर सकता है। इससे सिद्ध है कि यह भी एक बड़ा आर्ट है, एक बड़ी कला है।

इस कला को धारण करने के लिए किन गुणों की आवश्यकता है?

उपर्युक्त बातों से यह तो संकेत मिल ही जाता है कि इस कला में निपुण बनने के लिए हममें मुख्य रूप से गुण चाहियें— (1) स्नेहयुक्त सम्बन्ध एवं व्यवहार कौशल्य (Good Public Relations) (2) जिसको प्रत्यक्ष करना है उसकी अर्थात् परमात्मा की हृदय की गहराइयों से अनुभवयुक्त महिमा अथवा गुणगान (3) तन, मन, धन सभी साधनों से लग्न और धुन से इस ओर पुरुषार्थ (4) वर्तमान सार्वजनिक प्रचार एवं प्रसार साधनों का अलौकिक एवं दिव्यतायुक्त रीति से प्रयोग (5) अपने स्वभाव में नम्रता तथा सत्यता (6) ग़लत एवं अपवित्र साधनों का त्याग (7) अटूट प्रभु-निश्चय तथा उस एक के बल और भरोसे पर स्थिर।

यदि हम इन दिव्य गुणों को अपने जीवन में धारण कर इनका प्रयोग करेंगे तो हम इस कला में निपुण होंगे और ईश्वरीय सेवा के कार्य में, लोगों को ईश्वरीय ज्ञान से परिचित कराने में भी सफल सिद्ध होंगे।

***